।। अथ श्रीसाईसच्चरित।। ।। अध्याय २८ ।।

चिड़ियों का शिरड़ी को खींचा जाना-
(१) लक्ष्मीचंद (२) बुरहानपुर की महिला (३) मेघा का निर्वाण।

प्राक्कथन

श्री साई अनंत हैं। वे एक चींटी से लेकर ब्रह्मांण्ड पर्यन्त सर्व भूतों में व्याप्त हैं। वेद और आत्मविज्ञान में पूर्ण पारंगत होने के कारण वे सद्‌गुरु कहलाने के सर्वथा योग्य हैं। ? चाहे कोई कितना ही विद्वान्‌ क्यों न हो, परन्तु यदि वह अपने शिष्य की जागृति कर उसे आत्मस्वरुप का दर्शन न करा सके तो उसे सद्‌गुरु के नाम से कदापि सम्बोधित नहीं किया जा सकता। साधारणतः पिता केवल इस नश्वर शरीर का ही जन्मदाता है, परन्तु सद्‌गुरु जो जन्म और मृत्यु दोनों से ही मुक्ति करा देने वाले हैं। अतः वे अन्य लोगों से अधिक दयावान्‌ हैं।

श्री साईबाबा हमेशा कहा करते थे कि '' **मेरा भक्त चाहे एक हजार कोस की दूरी पर ही क्यों न हो, वह शिरड़ी को ऐसा खिंचता चला आता है, जैसे धागे से बँधी हुई चिड़ियाँ खिंच कर स्वयं ही आ जाती हैं।**'' इस अध्याय में ऐसी ही तीन चिड़ियों का वर्णन है।

लाला लक्ष्मीचन्द

ये महानुभाव बम्बई के श्री वेंकटेश्वर प्रेस में नौकरी करते थे। वहाँ से नौकरी छोड़कर वे रेलवे विभाग में आए और फिर वे मेसर्स रैली ब्रदर्स एंड कम्पनी में मुन्शी का कार्य करने लगे। उनका सन्‌ १९१० में श्री साईबाबा से सम्पर्क हुआ। बड़े दिन (क्रिसमस) से लगभग एक या दो मास पहले सांताक्रुज में उन्होंने स्वप्न में एक दाढ़ीवाले वृद्ध को देखा, जो चारों ओर से भक्तों से घिरा हुआ खड़ा था। कुछ दिनों के पश्चात्‌ वे अपने मित्र श्री. दत्तात्रेय मंजुनाथ बिजूर के यहाँ दासगणू का कीर्त्तन सुनने गए। दासगणू का यह नियम था कि वे कीर्त्तन करते समय श्रोताओं के सम्मख श्री साईबाबा का चित्र रख लिया करते थे। लक्ष्मीचन्द को यह चित्र देखकर महान्‌ आश्चर्य हुआ, क्योंकि स्वप्न में उन्हें जिस वृद्ध के दर्शन हुए थे, उनकी आकृति भी ठीक इस चित्र के अनुरुप ही थी। इससे वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि स्वप्न में दर्शन देने वाले स्वयं शिरड़ी के श्री साईनाथ समर्थ के अतिरिक्त और कोई नहीं है। चित्र-दर्शन, दासगणू का मधुर कीर्त्तन और उनके संत तुकाराम पर प्रवचन आदि का कुछ ऐसा प्रभाव उनपर पड़ा कि उन्होंने शिरड़ी-यात्रा का दृढ़ संकल्प कर लिया। भक्तों को चिरकाल से ही ऐसा अनुभव होता आया है कि **जो सद्‌गुरु या अन्य किसी आध्यात्मिक ज्ञान की खोज में निकलता है, उसकी ईश्वर सदैव ही कुछ न कुछ सहायता करते हैं।** उसी रात्रि को लगभग आठ बजे उनके एक मित्र शंकरराव ने उनका द्वार खटखटाया और पूछा कि क्या आप हमारे साथ शिरड़ी चलने को तैयार हैं? लक्ष्मीचन्द के हर्ष का पारावार न रहा और उन्होंने तुरन्त ही शिरड़ी चलने का निश्चय कर लिया। एक मारवाड़ी से पन्द्रह रुपये उधार लेकर तथा अन्य आवश्यक प्रबन्ध कर उन्होंने शिरड़ी को प्रस्थान कर दिया। रेलगाड़ी में उन्होंने अपने मित्र के साथ कुछ देर भजन भी किया। उसी डिब्बे में चार यवन यात्री भी बैठे थे, जो शिरड़ी के समीप ही अपने-अपने घरों को लौट रहे थे। लक्ष्मीचन्द ने उन लोगों से श्री साईबाबा के सम्बन्ध में कुछ पुछताछ की। तब लोगों ने उन्हें बताया कि श्री साईबाबा शिरड़ी में अनेक वर्षो से निवास कर रहे हैंऔर वे एक पहुँचे हुए संत हैं। जब वे कोपरगाँव पहुँचे तो बाबा को भेंट देने के लिए कुछ अमरुद खरीदने का उन्होंने विचार किया। वे वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्यमय दृश्य देखने में कुछ ऐसे तल्लीन हुए कि उन्हें अमरुद लेने की सुध ही न रही। परन्तु जब वे शिरड़ी के समीप आये तो एकाएक उन्हें अमरुद खरीदने की स्मृति हो आई। इसी बीच उन्होंने देखा कि एक वृद्धा टोकरी में अमरुद लिए ताँगे के पीछे-पीछे दौड़ती चली आ रही है। यह देख उन्होंने ताँगा रुकवाया और उनमें से कुछ बढ़िया अमरुद खरीद लिए। तब वह वृद्धा उनसे कहने लगी कि '' कृपा कर ये शेष अमरूद भी मेरी ओर से बाबा को भेंट कर देना। '' यह सुनकर तत्क्षण ही उन्हें विचार हो आया कि मैंने अमरुद खरीदने की जो इच्छा पहले की थी और जिसे मैं भूल गया था, उसी की इस वृद्धा ने पुनः स्मृति

करा दी है। श्री साईबाबा के प्रति उसकी भक्ति देख वे दोनों बड़े चकित हुए। लक्ष्मीचंद ने यह सोचकर कि हो सकता है कि स्वप्न में जिस वृद्ध के दर्शन मैंने किए थे, उनकी ही यह कोई रिश्तेदार हो, वे आगे बढ़े। शिरड़ी के समीप पहुँचने पर उन्हें दूर से ही मस्जिद में फहराती ध्वजाएँ दीखने लगीं, जिन्हें देख प्रणाम कर अपने हाथ में पूजन-सामग्री लेकर वे मस्जिद पहुँचे और बाबा का यथाविधि पूजन कर वे द्रवित हो गए। उनके दर्शन कर वे अत्यन्त आनन्दित हुए तथा उनके शीतल चरणों से ऐसे लिपटे, जैसे एक मधुमक्खी कमल के मकरन्द की सुगन्ध से मुग्ध होकर उससे लिपट जाती है। तब बाबा ने उनसे जो कुछ कहा, उसका वर्णन हेमाड़पंत ने अपने मूल ग्रन्थ में इस प्रकार किया है ''साले,रास्ते में भजन करते और दूसरे आदमी से पूछते हैं। क्या दूसरे से पूछना? सब कुछ अपनी आँखों से देखना। क्यों दूसरे आदमी से पूछना? सपना क्या झूठा है या सच्चा? कर लो अपना विचार आप। मारवाड़ी से उधार लेने की क्या जरुरत थी ? हुई क्या मुराद की पूर्ति?'' ये शब्द सुनकर उनकी सर्वव्यापकता पर लक्ष्मीचन्द को बड़ा अचम्भा हुआ। वे बड़े लज्जित हुए कि घर से शिरड़ी तक मार्ग में जो कुछ हुआ, उसका उन्हें सब पता है। इसमें विशेष ध्यान देने योग्य बात केवल यह है कि बाबा यह नहीं चाहते थे कि उनके दर्शन के लिए कर्ज लिया जाए या तीर्थ यात्रा में छुट्टी मनाए।

साँजा (उपमा)

दोपहर के समय जब लक्ष्मीचंद भोजन को बैठे तो उन्हें एक भक्त ने साँजे का प्रसाद लाकर दिया, जिसे पाकर वे बड़े प्रसन्न हुए। दूसरे दिन भी वे साँजा की आशा लगाए बैठे रहे, परन्तु किसी भक्त ने वह प्रसाद न दिया, जिसके लिए वे अति उत्सुक थे। तीसरे दिन दोपहर की आरती पर बापूसाहेब जोग ने बाबा से पूछा कि नैवेद्य के लिए क्या बनाया जाए? तब बाबा ने उनसे साँजा लाने को कहा। भक्तगण दो बड़े बर्तनों में साँजा भर कर ले आए। लक्ष्मीचंद को भूख भी अधिक लगी थी। साथ ही उनकी पीठ में दर्द भी था। बाबा ने लक्ष्मीचंद से कहा-(हेमाडपंत ने मूल ग्रंथ में इस प्रकार वर्णन किया है) ''तुमको भूख लगी है, अच्छा हुआ। कमर में दर्द भी है। लो, अब साँजे की ही करो दवा।'' उन्हें पुनः अचम्भा हुआ कि मेरे मन के समस्त विचारों को उन्होंने जान लिया है। वस्तुतः वे सर्वज्ञ हैं!

कुदृष्टि

इसी यात्रा में एक बार उनको चावड़ी का जुलूस देखने का भी सौभाग्य प्राप्त हो गया। उस दिन बाबा क फ़ से अधिक पीड़ित थे। उन्हें विचार आया कि इस कफ़ का कारण शायद किसी की नजर लगी हो। दूसरे दिन प्रातः काल जब बाबा मस्जिद को गए तो शामा से कहने लगे कि '' कल जो मुझे कफ़ से पीड़ा हो रही थी, उसका मुख्य कारण किसी की कुदृष्टि ही है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि किसी की नजर लग गई है, इसीलिए यह पीड़ा मुझे हो गई है। लक्ष्मीचन्द के मन में जो विचार उठ रहे थे, वही बाबा ने भी कह दिए। बाबा की सर्वज्ञता के अनेक प्रमाण तथा भक्तों के प्रति उनका स्न्रेह देखकर लक्ष्मीचंद बाबा के चरणों पर गिर पड़े और कहने लगे कि '' आपके प्रिय दर्शन से मेरे चित्त को बड़ी प्रसन्नता हुई है। मेरा मन-मधुप आपके चरण कमल और भजनों में ही लगा रहे। आपके अतिरिक्त भी अन्य कोई ईश्वर है, इसका मुझे ज्ञान नहीं। मुझ पर आप सदा दया और स्नेह करें और अपने चरणों के दीन दास की रक्षा कर उसका कल्याण करें। आपके भवभयनाशक चरणों का स्मरण करते हुए मेरा जीवन आनन्द से व्यतीत हो जाए, ऐसी मेरी आपसे विनम्र प्रार्थना है।''

बाबा से आशीर्वाद तथा उदी लेकर वे मित्र के साथ प्रसन्न और सन्तुष्ट होकर मार्ग में उनकी कीर्त्ति का गुणगान करते हुए घर वापस लौट आये और सदैव उनके अनन्य भक्त बने रहे। शिरडी जाने वालों के हाथ वे उनको हार, कपूर और दक्षिणा भेजा करते थे।

बुरहानपुर की महिला

अब हम दूसरी चिड़िया (भक्त) का वर्णन करेंगे। एक दिन बुरहानपुर में एक महिला ने स्वप्न में देखा कि श्रीसाईबाबा उसके द्वार पर खड़े भोजन के लिए खिचड़ी माँग रहे हैं। उसने उठकर देखा तो द्वारपर कोई भी न था। फिर भी वह प्रसन्न हुई और उसने यह स्वप्न अपने पति तथा अन्य लोगों को सुनाया। उसका पति डाक विभाग में नौकरी करता था। वे दोनों ही बड़े धार्मिक थे। जब उसका स्थानान्तरण अकोला को होने लगा तो दोनों ने शिरड़ी जाने का भी निश्चय किया और एक शुभ दिन उन्होंने शिरड़ी को प्रस्थान कर दिया। मार्ग में गोमती तीर्थ होकर वे शिरड़ी पहुँचे और वहाँ दो माह तक ठहरे। प्रतिदिन वे मस्जिद जाते और बाबा का पूजन कर आनन्द से अपना समय व्यतीत करते थे। यद्यपि दम्पति खिचड़ी का नैवेद्य भेंट करने को ही आए थे, परन्तु किसी कारणवश उन्हें १४

दिनों तक ऐसा संयोग प्राप्त न हो सका। उनकी स्त्री इस कार्य में अब अधिक विलम्ब न करना चाहती थी। इसीलिए जब १५ वें दिन दोपहर के समय वह खिचड़ी लेकर मस्जिद में पहुँची तो उसने देखा कि बाबा अन्य लोगों के साथ भोजन करने बैठ चुके हैं। परदा गिर चुका था, जिसके पश्चात् किसी का साहस न था कि वह भीतर प्रवेश कर सके। परन्तु वह एक क्षण भी प्रतीक्षा न कर सकी और हाथ से परदा हटाकर भीतर चली आई। बड़े आश्चर्य की बात थी कि उसने देखा कि बाबा की इच्छा उस दिन प्रथमतः खिचड़ी खाने की ही थी, जिसकी उन्हें आवश्यकता थी। जब वह थाली लेकर भीतर आई तो बाबा को बड़ा हर्ष हुआ और वे उसी में से खिचड़ी के ग्रास लेकर खाने लगे। बाबा की ऐसी उत्सुकता देख प्रत्येक को बड़ा आश्चर्य हुआ और जिन्होंने यह खिचड़ी की वार्त्ता सुनी, उन्हें भक्तों के प्रति बाबा का असाधारण स्नेह देख बड़ी प्रसन्नता हुई।

मेघा का निर्वाण

अब तृतीय महान् पक्षी की चर्चा सुनिए। बिरमगाँव का रहने वाला मेघा अत्यन्त सीधा और अनपढ़ व्यक्ति था। वह रावबहादुर ह.वि. साठे के यहाँ रसोईए का काम किया करता था। वह शिवजी का परम भक्त था, और सदैव पंचाक्षरी मंत्र '' नमः शिवाय '' का जप किया करता था। सन्ध्योपासना आदि का उसे कुछ भी ज्ञान न था। यहाँ तक कि वह संध्या के मूल गायत्रीमंत्र को भी न जानता था। रावबहादुर साठे का उस पर अत्यन्त स्नेह था। इसलिए उन्होंने उसे सन्ध्या की विधि तथा गायत्रीमंत्र सिखला दिया। साठेसाहेब ने श्री साईबाबा को शिवजी का साक्षात अवतार बतलाकर उसे शिरड़ी भेजने का निश्चय किया। किन्तु साठेसाहेब से पूछनेपर उन्होंने बताया कि श्री साईबाबा तो यवन है। इसलिए मेघा ने सोचा कि शिरड़ी में एक यवन को प्रणाम करना पड़े यह अच्छी बात नहीं है। भोला-भाला आदमी तो वह था ही, इसलिए उसके मन में असमंजस पैदा हो गया। तब उसने अपने स्वामी से प्रार्थना की कि कृपा कर मुझे वहाँ न भेजें। परन्तु साठेसाहेब कहाँ मानने वाले थे? उनके सामने मेघा की एक न चली। उन्होंने उसे किसी प्रकार शिरड़ी भेज दिया तथा उसके द्वारा अपने ससुर गणेश दामोदर उपनाम दादा केलकर को, जो शिरड़ी में ही रहते थे- एक पत्र भेजा कि मेघाका परिचय बाबा से करा देना। शिरड़ी पहुँचने पर जब वह मस्जिद में घुसा तो बाबा उत्यन्त क्रोधित हो गए और उसे उन्होंने मस्जिद में आने की मनाही कर दी। वे गर्जना कर कहने लगे कि '' उसे बाहर निकाल दो। '' फिर मेघा की ओर देखकर कहने लगे कि '' तुम तो एक उच्च कुलीन ब्राह्मण हो और मैं निम्न जाति का एक यवन। तुम्हारी जाति भ्रष्ट हो जाएगी। इसलिए यहाँ से बाहर निकल जाओ।'' ये शब्द सुनकर मेघा काँप उठा । उसे बड़ा विस्मय हुआ कि जो कुछ उसके मन में विचार उठ रहे थे, उन्हें बाबा ने कैसे जान लिया ? किसी प्रकार वह कुछ दिन वहाँ ठहरा और अपनी इच्छानुसार सेवा भी करता रहा, परन्तु उसकी इच्छा तृप्त न हुई। फिर वह घर लौट आया और वहाँ से त्रिंबक (नासिक जिला) को चला गया। वर्ष भरके पश्चात् वह पुनः शिरड़ी आया और इस बार दादा केलकर के कहने से उसे मस्जिद में रहने का अवसर प्राप्त हो गया । साईबाबा मौखिक उपदेश द्वारा मेघा की उन्नति करने के बदले उसका आंतरिक सुधार कर रहे थे। उसकी स्थिति में पर्याप्त परिवर्त्तन हो कर यथेष्ट प्रगति हो चुकी थी और अब तो वह श्री साईबाबा को शिवजी का ही साक्षात् अवतार समझने लगा था। शिवपूजन में बिल्व पत्रों की आवश्यकता होती है। इसलिए अपने शिवजी (बाबा) का पूजन करने के हेतु बिल्वपत्रों की खोज में वह मीलों दूर निकल जाया करता था। प्रतिदिन उसने ऐसा नियम बना लिया था कि गाँव में जितने भी देवालय थे, प्रथम वहाँ जाकर वह उनका पूजन करता और इसके पश्चात् ही वह मस्जिद में बाबा को प्रणाम करता तथा कुछ देर चरण-सेवा करने के पश्चात् ही चरणामृत पान करता था। एक बार ऐसा हुआ कि खंडोबा के मंदिर का द्वार बन्द था। इस कारण वह बिना पूजन किए ही वहाँ से लौट आया और जब वह मस्जिद में आया तो बाबा ने उसकी सेवा स्वीकार न की तथा उसे पुनः वहाँ जाकर पूजन कर आने को कहा और उसे बतलाया कि अब मंदिर के द्वार खुल गए हैं। मेघा ने जाकर देखा कि सचमुच मंदिर के द्वार खुल गये हैं। जब उसने लौटकर यथाविधि पूजा की, तब कहीं बाबा ने उसे अपना पूजन करने की अनुमति दी।

गंगास्नान

एक बार मकर संक्रान्ति के अवसर पर मेघा ने विचार किया कि बाबा को चन्दन का लेप करूँ तथा गंगाजल से उन्हें स्नान कराऊँ। बाबा ने पहले तो इसके लिए अपनी स्वीकृति न दी, परन्तु उसकी लगातार प्रार्थना के उपरांत उन्होंने किसी प्रकार स्वीकर कर लिया। गोदावरी नदी का पवित्र जल लाने के लिए मेघा को आठ कोस का चक्कर लगाना पड़ा। वह जल लकर लौट आया और दोपहर तक पूर्ण व्यवस्था कर ली। तब उसने बाबा को तैयार होने की सूचना दी । बाबा ने पुनः मेघा से अनुरोध किया कि ''मुझे इस झंझट से दूर ही रहने दो। मैं तो एक फकीर हुँ,

मुझे गंगाजल से क्या प्रयोजन?'' परन्तु मेघा कुछ सुनता ही न था। मेघा की तो यह दृढ़ धारणा थी कि शिवजी गंगाजल से अधिक प्रसन्न होते हैं। इसलिए ऐसे शुभ पर्व पर अपने शिवजी को स्नान कराना हमारा परम कर्त्तव्य है। अब तो बाबा को सहमत होना ही पड़ा और नीचे उतर कर वे एक पीढ़े पर बैठ गए तथा अपना मस्तक आगे करते हुए कहा कि '' अरे मेघा ! कम से कम इतनी कृपा तो करना कि मेरे केवल सिर पर ही पानी डालना। सिर शरीर का प्रधान अंग है और उस पर पानी डालना ही पर पानी डालना ही पूरे शरीर पर डालने के सदृश है।'' मेघा ने '' अच्छा अच्छा'' कहते हुए बर्तन उठाकर सिर पर पानी डालना प्रारम्भ कर दिया। ऐसा करने से उसे इतनी प्रसन्नता हुई कि उसने उच्च स्वर में '' हर हर गंगे '' की ध्वनि करते हुए समूचे बर्त्तन का पानी बाबा के सम्पूर्ण शरीर पर उँडेल दिया और फिर पानी का बर्त्तन एक ओर रखकर वह बाबा की ओर निहारने लगा। उसने देखा कि बाबा का तो केवल सिर ही भींगा है और शेष भाग ज्यों का त्यों बिल्कुल सूखा ही है। यह देख उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

त्रिशूल और पिंडी

मेघा बाबा को दो स्थानों पर स्नान कराया करता था। प्रथम वह बाबा को मस्जिद् में स्नान कराता और फिर वाड़े में नानासाहेब चाँदोरकर द्वारा प्राप्त उनके बड़े चित्र को। इस प्रकार यह क्रम १२ मास तक चलता रहा।

बाबा ने उसकी भक्ति तथा विश्वास दृढ़ करने के लिए उसे दर्शन दिए। एक दिन प्रातःकाल मेघा जब अर्ध निद्रावस्था में अपनी शैया पर पड़ा हुआ था, तभी उसे उनके श्रीदर्शन हुए। बाबा ने उसे जागृत जानकर अक्षत फेंके और कहा कि ''मेघा! मुझे त्रिशूल लगाओ। '' इतना कहकर वे अदृश्य हो गए। उनके शब्द सुनकर उसने उत्सुकता से अपनी आँखें खोलीं, परन्तु देखा कि वहाँ कोई नहीं है; केवल अक्षत ही यहाँ-वहाँ बिखरे पड़े हैं। तब वह उठकर बाबा के पास गया और उन्हें अपना स्वप्न सुनाने के पश्चात् उसने उन्हें त्रिशूल लगाने की आज्ञा माँगी। बाबा ने कहा कि ''क्या तुमने मेरे शब्द नहीं सुने कि मुझे त्रिशूल लगाओ। वह कोई स्वप्न तो नहीं, वरन् मेरी प्रत्यक्ष आज्ञा थी। **मेरे शब्द सदैव अर्थपूर्ण होते हैं, थोथे-पोचे नहीं।** '' मेघा कहने लगा कि आपने दया कर मुझे निद्रा से तो जागृत कर दिया है, परन्तु सभी द्वार पूर्ववत ही बन्द देखकर मैं मूढ़मति भ्रमित हो उठा हूँ कि कहीं स्वप्न तो नहीं देख रहा था। बाबा ने आगे कहा कि '' **मुझे प्रवेश करने के लिए किसी विशेष द्वार की आवश्यकता नही है। न मेरा कोई रुप ही है और न कोई अन्त ही। मैं सदैव सर्वभूतों में व्याप्त हूँ । जो मुझ पर विश्वास रखकर सतत मेरा ही चिन्तन करता है, उसके सब कार्य मैं स्वयं ही करता हूँ और अन्त में उसे श्रेष्ठ गति देता हूँ।** '' मेघा वाड़े को लौट आया और बाबा के चित्र के समीप ही दीवार पर एक लाल त्रिशूल खींच दिया । दूसरे दिन एक रामदासी भक्त पूने से आया। उसने बाबा को प्रणाम कर शंकर की एक पिंडी भेंट की। उसी समय मेघा भी वहाँ पहुँचे। तब बाबा उनसे कहने लगे कि देखो, शंकर भोले आ गए हैं। अब उन्हें सँभालो। मेघा ने पिंडी पर त्रिशूल लगा देखा तो उसे महान् विस्मय हुआ। वह वाड़े में आया। इस समय काकासाहेब दीक्षित स्नान के पश्चात् सिर पर तौलिया डाले 'साई' नाम का जप कर रहे थे। तभी उन्होंने ध्यान में एक पिंडी देखी , जिससे उन्हें कौतूहल-सा हो रहा था। उन्होंने सामने से मेघा को आते देखा । मेघा ने बाबा द्वारा प्रदत्त वह पिंडी काकासाहेब दीक्षित को दिखाई। पिंडी ठीक वैसी ही थी, जैसी कि उन्होंने कुछ घड़ी पूर्व ध्यान में देखी थी। कुछ दिनों में जब त्रिशूल का खींचना पूर्ण हो गया तो बाबा ने बड़े चित्र के पास (जिसका मेघा नित्य पूजन करता था) ही उस पिंडी की स्थापना कर दी । मेघा को शिव-पूजन से बडा प्रेम था । त्रिपुंड खींचने का अवसर देकर तथा पिंडी की स्थापना कर बाबा ने उसका विश्वास दृढ़ कर दिया।

इस प्रकार कई वर्षो तक लगातार दोपहर और सन्ध्या को नियमित आरती तथा पूजा कर सन् १९१२ में मेंघा परलोकवसी हो गया । बाबा ने उसके मृत शरीर पर अपना हाथ फेरते हुए कहा कि '' यह मेरा सच्चा भक्त था।'' फिर बाबा ने अपने ही खर्च से उसका मृत्यु-भोज ब्राह्मणों को दिए जाने की आज्ञा दी, जिसका पालन काकासाहेब दीक्षित ने किया।

।। श्री सद्‌गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ।।

सप्ताह पारायण : चतुर्थ विश्राम